Dhatu and Ras Dhatu

Dr. Savita

धातु - रसादयस्तु शरीरधारकतया धात्वन्तरपोषकतया च धातु शब्देनोच्यन्ते ।

धातु

धातु शब्द की व्युत्पत्ति –
धातु शब्द "धा" धातु में "तुन" प्रत्यय लगाने से बनता है।
धा + तुन् प्रत्यय
अर्थात् धा धातु + तुन् प्रत्यय

सुश्रुत ने धातु शब्द की निरुक्ति "धारणात् धातवः" से बतायी है जिसका अर्थ है धारण करना अर्थात् शरीर को धारण करने वाला तत्व "धातु।"
निरुक्ति - धातु की निरुक्ति संस्कृत के "डुधाञ् धारणपोषयोः" से हुई है जिसका अर्थ है धारण एवं पोषण करना।

परिभाषा –
दधाति धत्तेर्वा शरीर मनः प्राणान् इति धातु। (सिद्धान्त कौमुदी)
जो शरीर, मन एवं प्राणों को धारण करे, उसे धातु कहते हैं।

"दधाति धत्तेर्वा रस रक्त मांस मेदोऽस्थि मज्जा शुक्राणि।"
रस-रक्तादि को निर्मित एवं धारण करने वाले द्रव्यों को धातु कहते हैं।
करती है।
अष्टाङ्ग संग्रह के अनुसार धातुएँ शरीर का धारण करती हैं तथा सर्वदा एक धातु दूसरी धातु का पोषण

दधाति धारयति शरीर सम्वर्धकान् इति धातुः। (सिद्धान्त कौमुदी)
शरीर की वृद्धि करने वाली रचनाओं को धातु कहा जाता है
त एते शरीर धारणात् धातवः इत्युच्यन्ते।
शरीर को धारण करने के कारण धातु कहते हैं।

"शरीरं धारयन्त्येते धात्वाहारश्च सर्वदा।" (अ. स. सू. 1/34)

देह धातु के बारे में वैद्य पं. हरिदत्तशास्त्री ने कहा है कि जो पदार्थ स्वयं धारण, पालन, पोषण करता हुआ अपने से अभिन्न दूसरी देहधारक वस्तु को भी उत्पन्न करे, उसे आयुर्वेद में देहधातु अथवा धातु कहते हैं।

रसाद्रक्तं ततो मांस मासान्मेदः प्रजायते। मेदसोऽस्थि ततो मज्जा मज्ज्ञः शुक्रं तु जायते ।।
(सु. सू. 14/10)

रसाद्रक्तं ततो मांस मांसान्मेदस्ततोऽस्थि च । अस्थनो मज्जा ततः शुक्रं शुक्राद् गर्भः प्रजायते ।।
(च. चि. 15/16)
चरक एवं सुश्रुत के अनुसार रस से रक्त, रक्त से मांस, मांस से मेद, मेद से अस्थि, अस्थि से मज्जा तथा मज्जा से शुक्र, इस प्रकार सप्त धातुओं की उत्पत्ति होती है।

रसासृङ्कांसमेदोऽस्थिमज्जाशुक्राणि धातवः सप्त दूष्याः। (अ. ह. सू. 1/13)
अष्टाङ्ग हृदयकार ने रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा एवं शुक्र ये सात धातुएँ बतायी है। इन्हें दृष्य भी कहते हैं क्योंकि दोषों के द्वारा इन सात धातुओं का दूषण होता है। अर्थात् ये वातादि दोषों से दूषित होती रहती है।

Characteristics of धातु

1	धात्वान्तर पोषकत्व **Dhatu nourishes succeeding Dhatu.**
2	गति विवर्जित Not found in Dhatu.
3	धातुस्नेह परंपरा Dhatu nourishes succeeding as well as former Dhatu. They are connected to each other through nourishing pool.
4	शरीर पोषकत्व It is present in Dhatu.
5	शरीर धारणत्व Dhatu bears the body element.
6	Dhatu’s function is right from conception and continue throughout the life.

उत्पति

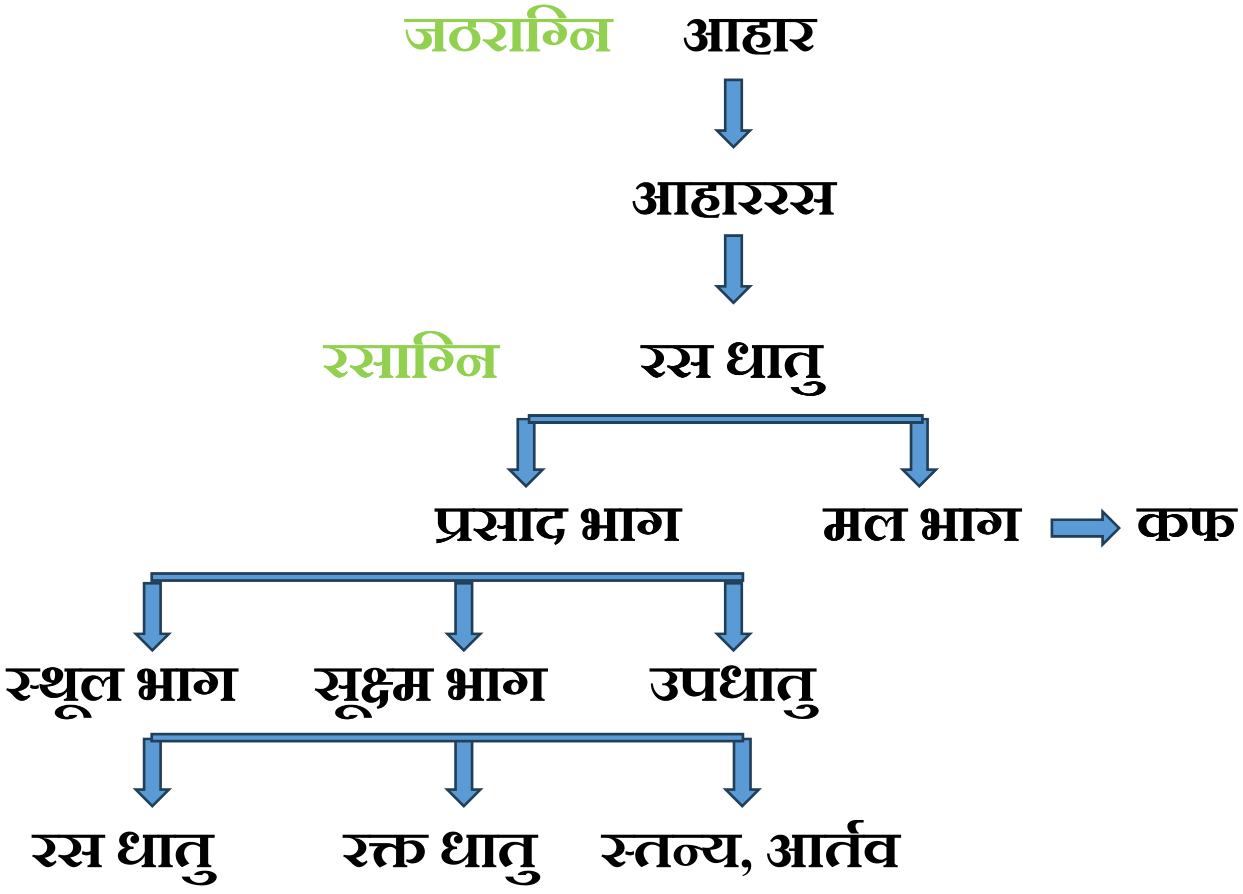
जठराग्नि
आहार
आहाररस
रसाग्नि
रस धातु
प्रसाद भाग
मल भाग
कफ
स्थूल भाग
सूक्ष्म भाग
उपधातु
रस धातु
रक्त धातु
स्तन्य, आर्तव

रसात् स्तन्यं ततो रक्तमसृजः कण्डराः सिराः ।

मांसाद्वसा त्वचः षट् च मेदसः स्नायुसम्भवः ।। (च.चि.15/17)

रस धातु

व्युत्पत्ति- रस + अच् = रस

निरुक्ति - तत्र रस गतौ धातुः अहरहर्गच्छतीत्यतो रसः ।। (सु. सू. 14/113)

रस गतौ धातु से यह रस शब्द बनता है, जो निरन्तर गतिशील रहता है (परिभ्रमित रहता है)।

देहस्य भुक्तान्नादेः प्रथम परिणामे सारे च । (वाचस्पत्यम्)

इस अर्थ मे प्रयुक्त होता है, यहाँ शरीर का आद्य (प्रथम) धातु रस इस अर्थ में प्रयुक्त होता है। (दिन-रात जो गतिशील रहता है)।
अन्यत्र रस शब्द से पारद, स्वरस (पांच कषाय कल्पना के अन्तर्गत) और रसनेन्द्रिय द्वारा जिसका आस्वादन किया जाता है, ऐसा अर्थ भी लिया जाता है।

तत्र पाञ्चभौतिकस्य चतुर्विधस्य षड्रसस्य द्विविधवीर्यस्याष्टविधवीर्यस्य वाऽनेकगुणस्योपयुक्तस्याहारस्य सम्यक् परिणतस्य यस्तेजोभूतः सारः परमसूक्ष्मः स रस इत्युच्यते ॥ (सु. सू. 14/3)

तेजोभूत इति सजसा वह्निसंभूत इत्यर्थः ।(डल्हण)

पृथिवी, जल, तेज, वायु, आकाश (पंचभूतात्मक), पेय, लेह्य, भक्ष्य, भोज्य (चतुर्विध), मधुर, अम्ल, लवण,कटु, तिक्त, कषाय छः रसयुक्त, शीत, उष्ण (द्विविध वीर्य) या शीत, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष, विशद, पिच्छिल, मृदु, तीक्ष्ण (आठ प्रकार के वीर्य) और गुरु, मन्द, हिम स्निग्धादि अनेक गुणवाले तथा यथाविधि (आहारविधि के अनुसार ठीक प्रकार से प्रयुक्त) भुक्ताहार के योग्य जाठराग्नि से परिपाक होने से जो प्रसाद (श्रेष्ठ) रूप अत्यन्त सूक्ष्म एवं सारभाग बनता है, वह रस है|

यह समस्त धातुओं का पोषण करने वाला है|

किट्टम् सारश्च तत्पक्वमन्नं सम्भवति द्विधा।
तत्राच्छं किट्टमन्नस्य मूत्रं विद्याद्धनं शकृत्॥ (अ. हृ. शा. 3/61)

पचने पर खाया हुआ आहार इस प्रकार दो भागो में विभक्त हो जाता है—किट्टभाग, सारभाग।
आहार का सार भाग रस पुनः रस आदि सात धातुओं की अग्नियों से परिपक्व होता है।

रस के दो भेद बताये गये हैं- 1. स्थायी रस, 2. पोषक रस।

स्थायी रस :- स्थायी रस, रस धातु होती है इस जो द्रव, शीत, मधुरे, स्निग्ध एवं चल गुण युक्त होता है।
पोषक रस :- अन्न रस होता है, इसमें समस्त धातु, उपधातु एवं मलों के पोषकांश होते हैं।

रस धातु स्थान

तस्य च हृदयस्थानम् स हृदयाच्चतुर्विंशतिधमनीरनुप्रविष्य ऊर्ध्वगा दश दश चाधोगामिन्यश्चतस्त्रश्च तिर्यग्गाः कृत्स्नं शरीरमहरहस्तर्पयति धारयति यापयति |

(सु सू14/3)

रस का स्थान हृदय है| वह 24 धमनियों अर्थात् दश ऊर्ध्वभाग में ,दश अधोभाग में एवं चार तिर्यक् भाग में जाने वाली होती हैं | इन्हीं के द्वारा शरीर का तर्पण, वृद्धि, धारण एवं यापन कर्म दिन एवं रात्रि में होते हैं |

रस का स्थान हृदय एवं 24 धमनियों को माना है |

रस का स्वरूप एवं गुण :-

"स खलु द्रवानुसारी स्नेहनजीवनतर्पण धारणादिभिर्विशेषैः सौम्य् इत्यवगम्यतेः।" (सु.सू.14/3)

जल महाभूत की प्रधानता के कारण रस धातु स्निग्ध, द्रव, सौम्य, गतिशील तथा तर्पण गुणों से युक्त होती है।

1. सौम्यत्वम् - आचार्यों ने कफ दोषों के स्थान के सम्बन्ध में वर्णन करते हुए लिखा है कि रसधातु भी प्राकृत कफ का स्थान है। यही कारण है कि रस धातु भी कफ दोष के समान सौम्य गुणयुक्त है। सौम्यगुण ही शरीर में शीतलता प्रदान करता है। अतः रस धातु में शीत गुण पाया जाता है।

2. स्निग्धत्वम् - स्निग्धता एक ऐसा गुण है, जो शरीर की पुष्टि एवं तुष्टि प्रदान करने का कार्य विशेष रूप से करता है। रस धातु में पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में विद्यमान होते हैं। यही कारण है कि यह शरीर की वृद्धि तथा विकास के द्वारा अंगों में गौरवता एवं स्थूलता प्रदान करता है।

3. द्रवत्वम् - यह रसधातु का विशेष गुण है, जिसके कारण यह गतिशील होकर शरीर में निरन्तर संवहन करता रहता है। संवहन करते हुए ही यह दूरस्थ धातुओं तथा अंग प्रत्यंगो को पोषक सामग्री पहुँचाकर उन्हें जीवनीय शक्ति प्रदान करता है।

4. सरत्वम् - अतिद्रवत्व गुण रस धातु में सर एवं सूक्ष्म गुणों को भी जन्म देता है, ताकि वह सूक्ष्मतम स्त्रोतसों में भी प्रविष्ट होकर उन्हें पोषक सामग्री प्रदान कर तर्पण कर्म कर सके।

गुण – स तु द्रवः शीतः स्वादुः स्निग्धचलो भवेत्। (भा। पू ३/१३५)

सोम्य ,द्रव ,श्वेत ,मधुर ,स्निग्ध,चल रस के गुण है |

कर्म- रसस्तुष्टिं प्रीणनं रक्तपुष्टिं च करोति । (सु. सू. 15/7)

प्रीणयिता तर्पयिता ।(डल्हण)

रस शरीर को तुष्टि (प्रसन्न, संतुष्टि) तथा प्रीणन (तर्पण) करता है एवं रक्त को पोषण देता है |

रस संवहन

व्यानेन रसधातु हि विक्षेपोचित कर्मणा।
युगपत् सर्वतोऽजस्त्रं देहे विक्षिप्येत सदा।। (च. चि. 15/36)

अर्थात्

धातुओं को विक्षेपित करने वाली व्यानवायु रसधातु को रक्त धातु के साथ सम्पर्ण शरीर में, हमेशा (दिन एवं रात्रि को) विक्षेप (फेंकती या पहुँचाती) करती है। अर्थात् आयुर्वेद मतानुसार रस का संवहन व्यान वायु के द्वारा होता है।

"स शब्दार्चिजलसन्तानवदणुना विशेषेणानुधावत्येवं शरीरं केवलम् ।।" (सु. सू. 14/16)

वह रस शब्द समूह की तरह तिर्यक (तिरछी), अर्चि (अग्नि) सन्तान (समूह) की तरह उर्ध्वगामी तथा जल समूह की तरह अधोगामी होकर समस्त शरीर में परिसंचरण (संवहन) करता रहता है।

रस क्षय के लक्षण-

चरकानुसार-

घट्टते सहते शब्दं नौच्चैर्द्रवति शूल्यते।
हृदयं ताम्यति स्वल्प चेष्टस्यापि रसक्षये ॥ (च. सू. 17/64)

रस धातु के क्षय होने पर अल्प परिश्रम (अल्प चेष्टा) करने पर हृदय में हिलाने (घट्टन) जैसा अनुभव होता है अर्थात् इस प्रकार लगता है कि हृदय को कोई हिला रहा है। तथा वह मनुष्य ऊँचें शब्दों को सहन नही कर सकता है। हृदय में धक् धक् होने लगती है, चुभने की वेदना होती है (पीड़ा), आंखों के सामने अंधकार सा प्रतीत होने लगता है।

सुश्रुतानुसार -

रसोऽतिवृद्धो हृदयोत्क्लेदं प्रसेकं चापादयति। (सु. सू. 15/19)

रस की अतिवृद्धि होने पर हृदय में उत्क्लेद (जी मिचलाना, हल्लास), प्रसेक (मुँह से लार गिरना) ये लक्षण होते हैं।

रस धातु का प्रमाण (Pramana of Rasa Dhatu)-

नवाञ्जलयः पूर्वस्याहारपरिणामधातो यं रस इत्याचक्षते। (च. शा. 7/15)

अपनी अञ्जलि के अनुसार शरीर में आहार के पाचन हो जाने के बाद जिसको रस धातु कहते है उसका परिमाण 9 (नौ) अंजलि है।

रसवह स्त्रोतस –

"रसवहानां स्त्रोतसां हृदयं मूलं दश च धमन्यः।" (च.वि.5)
"रसवहे द्वे तयोर्मूलं हृदयं रसवाहिन्यश्च धमन्यः । (सु.शा.9/15)

रसवहस्त्रोतोदुष्टिहेतु - गुरूशीतमतिस्निग्धमतिमात्रमश्नातम्।
रसवाहिनी दुष्यन्तिं चिन्तानां चातिचिन्तनात् ।। (च.वि.5)

रसप्रदोषज विकार (रसज रोग)-

वात, पित्त, कफ आदि दोषों से रस धातु के दूषित होने से रसज रोग उत्पन्न होते हैं।

अश्रद्धा चारुचिश्चास्यवैरस्यमरसज्ञता ।
हल्लासो गौरवं तन्द्रा साङ्गमर्दो ज्वरस्तमः ।।
पाण्डुत्वं स्रोतसां रोधः क्लैब्यं सादः कृशाङ्गता।
नाशोऽग्नेरयथाकालं बलयः पलितानि च ।।
रसप्रदोषजा रोगाः ....। (च.सू. 28/9-10)

आहार मुख में प्रविष्ट करने पर आहार मुख से नीचे चला जाता है, परन्तु उस मनुष्य की आहार ग्रहण करने की इच्छा नहीं होती है।

2. अरुचि-अन्न में रुचि न होना।

अन्न ग्रहण की इच्छा होते हुए भी मुख में अन्न (आहार) प्रविष्ट करने पर आहार का मुख से नीचे न जाना।

3. अस्य वैरस्य-मुंह का स्वाद अलग होता है।

4. अरसज्ञता-रस का ठीक प्रकार से ज्ञान न होना।

5. हल्लास जी मिचलाना।

6. गुरुता-शरीर में भारीपन होना।

7. तन्द्रा

8. अङ्गमर्द-शरीर में पीड़ा।

9. तम-आँखों के आगे अंधकार दिखाई देना।

10. ज्वर (**Fever**) होना।

11. पाण्डुता-पाण्डुरोग होना।

12. स्रोतसों में अवरोध होना ।

13. क्लेबी-नपुंसकता।

14. अङ्गों में शिथिलता ।

15. अग्निमांद्य ।

16. अंगों में दुबलापन।

17. अकाल में शरीर में झुर्रिया होना।

18. बालों का पकना ।

त्वक्सार (रससार) पुरुष के लक्षण (Symptoms of Rasasara Purusha)-

तत्र स्निग्धश्लक्ष्णमृदुप्रसन्नसूक्ष्माल्पगम्भीरसुकुमारलोमा सप्रभेव च त्वक् त्वक्साराणाम्। सा सारता सुख सौभाग्यैश्वर्योपभोगबुद्धिविद्यारोग्यप्रहर्षणान्यायुष्यत्वं चाचष्टे। (च. वि. 8/103)

त्वक्सार पुरुष की त्वचा स्निग्ध, श्लक्ष्ण, मृदु, प्रसन्न (देखने में स्वच्छ), सूक्ष्म, अल्प, गम्भीर, सुकुमार (मुलायम या रेशमी) रोमों वाली तथा चमकदार होती है। इस प्रकार का त्वक्सार का होना सुख, सौभाग्य, ऐश्वर्य, उपभोग, बुद्धि, विद्या, आरोग्य, प्रसन्नता एवं दीर्घायु का सूचक है।